राजेन्द्र सिंह पठानिया और अन्य

बनाम

एनसीटी राज्य दिल्ली और अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 1582/2011)

12 अगस्त 2011

[जस्टिस पी. सदाशिवम और डॉ. बी.एस. चौहान, जे.जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 धारा 107/151 के तहत प्रतिवादी संख्या 3 और 4 के विरूद्व कार्यवाही- चूंकि गश्त के दौरान पुलिस कांस्टेबलों ने उन्हें सार्वजनिक स्थान पर नशे की हालत में एक दूसरे से झगडते हुए पाया- प्रतिवादियों को मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया और चूंकि वे जमानत मुचलका नहीं भर सके, इसलिए उन्हें न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया- अगले दिन बांड भरे गए और उत्तरदाताओं को रिहा कर दिया गया। उत्तरदाताओं द्वारा उच्च न्यायालय में रिट याचिका पेश की जिसमें धारा 107/151 के तहत कार्यवाही को रद्द करने की मांग की गई है और अवैध हिरासत के लिए उक्त कांस्टेबलों के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने के लिए कहा- प्रतिवादी संख्या 3 और 4 के विरूध्द आपराधिक मामले को रद्द कर दिया गया और केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) को कांस्टेबलों के खिलाफमामले की जांच करने का निर्देश दिया और गलत कारावास के लिए प्रत्येक प्रतिवादी को 25000 रूपये का मुआवजा दिलवाया। अपील में

निर्धारित किया कि तथ्यों के आधार पर यह एक उपयुक्त मामला नहीं था जहां जांच सीबीआई को सौंपी जाती - यह एक ऐसा मामला नही था जिसमें राज्य के अधिकारियों की रूचि थी या वे घटना में शामिल थे - धारा 151 के तहत गिरफतारी तब की जा सकती है जब गिरफतार किया जाने वाला व्यक्ति संज्ञेय अपराध करने की योजना बनाता है - धारा 107 के तहत आपातकालीन स्थिति में कार्य करने का अधिकार क्षेत्र मजिस्ट्रेट में निहित है। धारा 107/151 के तहत कार्यवाही चार साल पहले शुरू की गई थी और उच्च न्यायालय ने कार्यवाही को रद्द कर दिया- इतने विलंबित चरण में उस सीमा तक निर्णय की शुद्धता पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है- अन्यथा उक्त मुददा भी पूरी तरह से अकादमिक ही रहता है। जहां तक प्रत्येक को 25000 रूपये का मुआवजे देने के मुददे का संबंध है, उच्च न्यायालय ने सांकेतिक मुआवजा देने में भी गलती की क्योंकि उच्च न्यायालय ने इस तथ्य की कोई जांच नहीं की और राज्य द्वारा प्रस्तुत स्थिति रिपोर्ट पर विचार करने के बाद केवल उन व्यक्तियों को सुने बिना आदेश पारित कर दिया, जिनके विरूद्व सत्ता के दुरूपयोग के आरोप लगाए गए थे। आक्षेपित निर्णय को उस विस्तार के सिवाय रद्द किया जाता है, जहां प्रतिवाद करने वाले उत्तरदाताओं के विरूद्व धारा 107/151 सीआरपीसी के तहत जांच कार्यवाही निरस्त कर दी गई थी।

अपीलकर्ता नंबर 2 से 4 कांस्टेबलों ने गश्त के दौरान प्रतिवादी संख्या 3 और 4 को नशे की हालत में एक दूसरे से लडते हुए पाया। उन

पर आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 107/151 के तहत मामला दर्ज किया गया और उन्हें विशेष कार्यकारी मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। उत्तरदाता मुचलका प्रस्तुत नहीं कर सके और इस प्रकार मजिस्ट्रेट ने उन्हें न्यायिक हिरासत में भेज दिया। उक्त उत्तरदाताओं ने अगले दिन 15000 रूपये का मुचलका भरा और उन्हें रिहा कर दिया गया। इसके बाद, उत्तरदाताओं ने सीआरपीसी की धारा 107/151 के तहत कार्यवाही को रद्द करने के लिए एक रिट याचिका दायर की और अपीलकर्ता संख्या 2 से 4 के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू करने और उन्हें अवैध हिरासत के लिए मुआवजा देने का आदेश दिया। उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 3 और 4 के खिलाफ दर्ज आपराधिक मामला रदद कर दिया और केंद्रीय जांच ब्यूरो को अपीलकर्ता संख्या 2 से 4 के खिलाफ मामले की जांच करने का निर्देश दिया और गलत कारावास के लिए उक्त उत्तरदाताओं में से प्रत्येक को 25000 रूपये का मुआवजा दिया गया। इसलिए अपीलकर्ताओं ने तत्काल अपील दायर की।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया:

1.1 रिट याचिका में कुल मिलाकर सात प्रतिवादी थे। जिनमें अपीलकर्ता और मजिस्ट्रेट भी शामिल हैं, जिसने सीआरपीसी की धारा 107/151 के तहत आदेश पारित किया था। राज्य के वकील ने सभी सात उत्तदाताओं की ओर से नोटिस स्वीकार कर किया। रिट अदालत के समक्ष

अधिकांश उत्तरदाताओं को व्यक्तिगत क्षमता में नाम लेकर पक्षकार बनाया गया था, जिसमें उन्होने अपनी शक्तियों से अधिक का उपयोग करने और अपने पदों का दुरूपयोग करने का आरोप लगाया था। यह दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर कुछ भी नहीं है कि उपस्थित वकील ने उन लोगों के साथ कोई संचार किया था जिनके विरूद्व दुर्भावनापूर्ण आरोप लगाए गए थे, विशेष रूप से, अपीलकर्ता नंबर 2 से 4 और मजिस्ट्रेट पर। इस प्रकार, उनमें से किसी को भी उच्च न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने का अवसर नहीं मिला। यह दलील कि राज्य उन सभी का प्रतिनिधित्व कर रहा था, प्रत्येक व्यक्ति को सुनने की कोई आवश्यकता नहीं थी, स्वीकार नहीं किया जा सकता। इन अपीलों में आक्षेपित निर्णय और आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन करते हुए पारित किया गया था। (पैरा 7) (269-सी-जी)

1.2 रिट याचिकाकर्ता द्वारा एक दूसरे के साथ दुर्व्यवहार, धमकी और झगडे के आरोप पर आगे की कोई जांच या पूछताछ नहीं की गई थी। यद्यपि उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उक्त प्रतिवादियों को एक दिन के लिए जेल में रखा गया था, जिसके परिणामस्वरूप उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ, यह महसूस किए बिना कि मजिस्ट्रेट के आदेश के आलोक में चूंकि वे मुचलके प्रस्तुत करने में विफल रहे, और अन्य कोई विकल्प उपलब्ध नहीं था और उन्हें न्यायिक में भेज दिया गया। यदि रिट याचिकाकर्ता इससे व्यथित थे, तो वे अपील/पुनपरीक्षण दायर करके इसे चुनौती दे सकते थे। यह समझ में नहीं आ रहा है कि

किन परिस्थितियों में अवैध हिरासत के मुददे की जांच के लिए रिट याचिका पर विचार किया गया, खासकर उस मामले में जहां उन्हें न्यायिक हिरासत में रखने का औचित्य था। (पैरा 9) (270-जी-एच; 271-ए-बी)

1.3 वर्तमान मामले में, रिट याचिकर्ताओं की शिकायत मूल रूप से दो कांस्टेबलों और एक हेड कांस्टेबल के खिलाफ थी। यह कोई ऐसा मामला नहीं था जहां माना जा सके कि राज्य के अधिकारी इस घटना में रूचि रखते थे या इसमें शामिल थे। इस प्रकार, यह उपयुक्त मामला नहीं था जहां जांच सीबीआई को सौंपी जा सके। यहां ना केवल मौजूदा मामले में उच्च न्यायालय ने सीबीआई को जांच करने का निर्देश दिया है, बल्कि इन अपीलों के साथ सुने गए अन्य संबंधित मामलों से भी यह स्पष्ट है उसी माननीय न्यायाधीश ने सीआरपीसी की धारा 107/151 के तहत एक और मामूली मामले में सीबीआई जांच का निर्देश दियाऔर अलग आदेश द्वारा उनका निपटारा किया। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय इस तरह के निर्देश बेहद अनौपचारिक और लापरवाहीपूर्ण तरीके से यह मानते हुए पारित कर रहा है कि प्रत्येक जांच किसी विशेष जांच एजेंसी द्वारा की जानी चाहिए। [पैरा 12 और 13] [271-ई-एच; 272-ए-डी]

दिशा बनाम गुजरात राज्य और अन्य जेटी (2011) 7 एससी 548; अशोक कुमार तोदी बनाम किश्धर जहान और अन्य जेटी (2011) 3 एससी 50, नर्मदा बाई बनाम गुजरात राज्य जेटी (2011) 4 एससी 279 संदर्भित।

1.4 सीआरपीसी की धारा 107/151 का उद्देश्य निवारक न्याय के लिए है ना कि दंडात्मक। धारा 151 केवल तभी लागू की जानी चाहिए जब शांति के लिए आसन्न खतरा हो या धारा 107 सीआरपीसी के तहत शांति भंग होने की संभावना हो। धारा 151 के तहत गिरफतारी का समर्थन तब किया जा सकता है जब गिरफतार किया जाने वाला व्यक्ति संज्ञेय अपराध करने की योजना बनाता है। यदि धारा 107/151 के तहत कार्यवाही शांति भंग होने की आशंका से निपटने के लिए नितांत आवश्यक प्रतीत होती है, तो त्वरित कार्रवाई करना संबंधित प्राधिकारी पर निर्भर करता है। धारा 107 के तहत कार्रवाई करने के लिए मजिस्ट्रेट को जो अधिकार क्षेत्र दिया गया है, उसका प्रयोग आपातकालीन स्थिति में किया जाना चाहिए। इसलिए, धारा 151 मजिस्ट्ेट के आदेश के बिना और वारंट के बिना गिरफतार करने की शक्ति के प्रयोग के लिए स्पष्ट रूप से आवश्यकताओं को निर्धारित करती है। यदि ये शर्तें पूरी नहीं होती है और किसी व्यक्ति को सीआरपीसी की धारा 151 के तहत गिरफतार किया जाता है तो गिरफतार करने वाले प्राधिकारी पर संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 में निहित मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने के लिए कानून के तहत कार्यवाही की जा सकती है।(पैरा 14 और 15) (272 डी-एच, 273-ए-बी)

अहमद नूरमोहम्मद भटटी बनाम गुजरात राज्य और अन्य एआईआर 2005 एससी 2115 2005(2) एससीआर 879, जांगिंदर कुमार बनाम सरकार यूपी राज्य और अन्य, एआईआर 1994 एससी 1349 डी.के बसु

बनाम संयुक्त राज्य अमेरिका राज्य पश्चिम बंगाल का एआईआर 1997 एससी 610: 1996 (10) पूरक। एससीआर 28 संदर्भित।

1.5 वर्तमान मामले में धारा 107/151 सीआर.पी.सी के तहत कार्यवाही दिनांक 04.02.2007 को शुरू हुई थी और उच्च न्यायालय ने कार्यवाही रदद कर दी। इतने विलम्बित चरण में, उस सीमा तक निर्णय की शुद्धता पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। अन्यथा इस स्तर पर उन कार्यवाहियों को रदद करने का मुददा पूरी तरह अकादमिक ही बना रहता। [पैरा 16] [273-डी-बी]

1.6 जहां तक किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के मामले में मुआवजा देने के मुददे का संबंध है, हालांकि उच्च न्यायालय और यह न्यायालय अनुच्छेद 32 और 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए ऐसे उल्लंघनों के लिए मुआवजा दे सकते हैं, लेकिन ऐसी शक्तियों का प्रयोग अत्यधिक उत्साह में नही किया जावें। इन अनुच्छेदों का उपयोग उन अधिकारों और दायित्वों के प्रवर्तन के विकल्प के रूप में नहीं किया जा सकता है। जिन्हें अदालतों की सामान्य प्रक्रिया के माध्यम से प्रभावकारिता से लागू किया जा सकता है। कोई भी मुआवजा देने से पहले शिकायत में कथित तथ्यों के प्रश्न पर उचित जांच होनी चाहिए। न्यायालय रिपोर्ट की जांच कर सकती है और उसका खंडन करने के लिए आपत्तियां दाखिल करने और दूसरे पक्ष को सुनने का अवसर देने

के बाद मुददे का निर्धारण कर सकती है। यदि न्यायालय पूछताछ में पेश किए गए सबूतों की पुनः मूल्यांकन कर उसी निष्कर्ष पर पहुंचती है तो मुआवजा देने की अनुमति दी जा सकती है। ऐसी स्थिति में मौद्रिक मुआवजा देने की अनुमति है जब राज्य या उसके सेवकों द्वारा अपनी शक्तियों के कथित कृत्य में किए गए उल्लंघन के लिए निवारण का यही एकमात्र व्यावहारिक तरीका उपलब्ध हो। (पैरा 17] [273-ई-एच; 274-ए)

सेबस्टियन एम. होंग्रे बनाम भारत संघ एआईआर 1984 एससी 1026:1984 (3) एससीआर 544 भीम सिंह, विधायक बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य और अन्य एआईआर 1986 एससी 494:1985 (4) एससी 677, श्रीमति नीलाबती बेहरा बनाम उडीसा राज्य और अन्य एआईआर 1993 एससी 1960:1993। (2) एससीआर 581, डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एआईआर 1997 एससी 610, 1996 (10) पूरक एससीआर 284, अध्यक्ष, रेल्वे बोर्ड और अन्य बनाम श्रीमती चंद्रिमा दास और अन्य एआईआर 2000 एससी 988 2000 (1) एससीआर 480, एस.पी.एस. राठौड बनाम हरियाणा राज्य और अन्य (2005) 10 एससीसी 1, सूबे सिंह बनाम हरियाणा राज्य और अन्य ए आईआर 2006 एससी 1117 2006 (2) एससीआर 67, मुंशी सिंह गौतम (डी) और अन्य वि. म.प्र. राज्य एआईआर 2005 एएसी 402 2004 (5) पूरक एससीआर 1092, भारत अमृतलाल कोठारी बनाम दोसुखान समदखान सिंधी और अन्य एआईआर 2010 एससी 475, 2009 (15) एससीआर 662 संदर्भित।

1.7 उच्च न्यायालय ने प्रत्येक को 25000 रूपये का सांकेतिक मुआवजा देने में भी गलती की, क्योंकि उच्च न्यायालय ने कोई जांच नहीं की और अपीलकर्ता संख्या 1 द्वारा प्रस्तुत स्थिति रिपोर्ट पर बिना किसी सुनवाई के उन व्यक्तियों को जिनके विरूद्ध सत्ता के दुरूपयोग के आरोप लगाए गए थे आदेश पारित कर दिया। (पैरा 19) (275-ए-बी)

1.8 आक्षेपित निर्णय और आदेश को उस विस्तार के सिवाय रद्द किया जाता है, जहां प्रतिवाद करने वाले उत्तरदाताओं के विरूद्ध धारा 107/151 सीआर.पी.सी के तहत कार्यवाही निरस्त कर दी गई थी। (पैरा 20) (275-बी-सी)

केस कानून संदर्भ

जेटी (2011) 7 एससी 548	उल्लेखित है	पैरा 12
जेटी (2011) 3 एससी 50	उल्लेखित है	पैरा 12
(2011) 4 एससी 279	उल्लेखित है	पैरा 12
2005 (2) एससीआर 879	उल्लेखित है	पैरा 15
एआईआर 1994 एससी 1349	उल्लेखित है	पैरा 15
1994 (4) एससीसी 260	उल्लेखित है	पैरा 15
1996 (10) पूरक। एससीआर 28	उल्लेखित है	पैरा 15
1984 (3) एससीआर 544	उल्लेखित है	पैरा 17

1985 (4) एससीआर 677	उल्लेखित है	पैरा 17
1993 (2) एससीआर 581	उल्लेखित है	पैरा 17
1996 (10) पूरक एससीआर 284	उल्लेखित है	पैरा 17
2000 (1) एससीआर 480	उल्लेखित है	पैरा 17
(2005) 10 एससीसी 1	उल्लेखित है	पैरा 17
2006 (2) एससीआर 67	उल्लेखित है	पैरा 18
2004 (5) पूरक एससीआर 1092	उल्लेखित है	पैरा 18
2009 (15) एससीआर 662	उल्लेखित है	पैरा 18

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार का संदर्भ : आपराधिक अपील 2011 की संख्या 1582।

दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के डब्लूपी (आपराधिक) संख्या 264/2007 में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 25.02.2008 से।

साथ में

आपराधिक अपील संख्या 1583/2011।

पी.पी. मल्होत्रा, एएसजी, प्रदीप गुप्ता, के.के. मोहन, परिनव गुप्ता, पी.के. डे, साधना संधू, एमपीएस तोमर, अनिल कटियार, डी.एस. मेहरा, कंचन कौर डौढी, अनिल कुमार संगल, डी.पी. मौहंती, ए.पी. मोहंती और सी. बालकृष्ण पक्षकारो की ओर से उपस्थित हुए।

न्यायालय का निर्णय जस्टिस डॉ बी.एस. चौहान द्वारा सुनाया गया।

1. दोनों मामलों में अनुमति दी गई।

2. ये अपीलें दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका (सीआरएल) संख्या 264/2007 में पारित उसी फैसले और आदेश दिनांक 25.02.2008 के खिलाफ दायर की गई है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 3 और 4 के खिलाफ दर्ज आपराधिक मामले को रदद कर दिया है। केन्द्रीय जांच ब्यूरो (बाद में इसे सीबीआई कहा जाएगा) को अपीलकर्ता संख्या 2 से 4 के खिलाफ उक्त उत्तरदाताओं द्वारा लगाए गए आरोपों के संबंध में मामले की जांच करने के लिये निर्देशित किया;और गलत कारावास के लिए उक्त उत्तरदाताओं में से प्रत्येक को 25000 रूपये का मुआवजा दिलवाया गया।

3. तथ्य:

ए. 03.02.2007 को कांस्टेबल वीरेन्द्र कुमार, हेड कांस्टेबल कृष्ण सिंह और कांस्टेबल जय कुमार, अपीलकर्ता संख्या क्रमशः 2 से 4 ने क्षेत्र में गश्त के दौरान यह पाया कि संजीव कुमार सिंह औरदलीप गुप्ता, प्रतिवादी संख्या 3 और 4 क्रमशः नशे की हालत में एक दूसरे से लड रहे थे। उक्त अपीलकर्ताओं ने उन्हें शांत करने की कोशिश की लेकिन व्यर्थ रही। यह महसूस करने बाद कि वे नशे की हालत में थे, उपरोक्त अपीलकर्ता उक्त दोनों उत्तरदाताओं को चिकित्सा परीक्षण के लिए अस्पताल

ले गए, जहां उन्होंने अस्पताल के डॉक्टर और अन्य कर्मचारियों के साथ दुर्व्यवहार किया। चिकित्सीय जांच के बाद यह राय दी गई कि उक्त दोनों उत्तरदाताओं ने शराब पी रखी थी।

बी. उक्त उत्तरदाताओं पर दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद सीआरपीसी कहा जाएगा) की धारा 107/151 के तहत मामला दर्ज किया गया था और उन्हें 04.02.2007 को विशेष कार्यकारी मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था। मजिस्ट्रेट ने कारण बताओ नोटिस जारी किया कि क्यों ना उन्हें एक वर्ष की अवधि के लिए शांति बनाए रखने के लिए प्रत्येक की 5000 रूपये के निजी मुचलके और इतनी ही राशि की जमानत देने का आदेश दिया जाना चाहिए। उक्त प्रतिवादी मुचलके प्रस्तुत नहीं कर सके और इस प्रकार, मजिस्ट्रेट ने उन दोनों को न्यायिक हिरासत में भेज दिया। उक्त उत्तरदाताओं ने अगले दिन यानी 05.02.2007 को 15000 रूपये का मुचलका भरा और फिर उन्हें रिहा कर दिया गया और गलत कारावास के लिए उक्त उत्तरदाताओं में से प्रत्येक को 25000 रूपये का मुआवजा दिया गया।

सी. उक्त उत्तरदाताओं ने 19.02.2007 को दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष आपराधिक रिट याचिका संख्या 264/2007 दायर की और मुख्य रूप से सीआरपीसी की धारा 107/151 के तहत कार्यवाही को रद्द करने की प्रार्थना की और अपीलकर्ता क्रमांक 2 से 4 के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही

शुरू करनें और उन्हें अवैध हिरासत के लिए मुआवजा देने के लिए कहा। रिट याचिका 26.02.2007 को सुनवाई के लिए आई। राज्य की ओर से पेश उपस्थित वकील ने रिट याचिका में सभी उत्तरदाताओं की ओर से नोटिस लिया। उच्च न्यायालय ने पुलिस अधिकारियों को स्टेटस रिपोर्ट पेश करने का निर्देश दिया। अपीलार्थी क्रमांक 1 के मामले में जांच कर दिनांक 10.07.2007 को स्थिति रिपोर्ट प्रस्तुत की। याचिका पर 31.10.2007 को सुनवाई हुई और दिनांक 25.02.2008 के फैसले और आदेश के तहत अनुमति दे दी गई। इसलिए ये अपीले है।

4. एनसीटी दिल्ली राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान ने अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री पी.पी. मल्होत्रा और अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री प्रदीप गुप्ता ने प्रस्तुत किया है कि उक्त दोनों प्रतिवादी शराब के नशे में थे और सार्वजनिक स्थान पर दूसरे से लड रहे थे। इस प्रकार तनाव और शांति भंग होने का खतरा था। अपीलकर्ता संख्या 2 से 4 ने उन्हें शांत करने की कोशिश की लेकिन उक्त उत्तरदाताओं ने कोई ध्यान नहीं दिया। उन पर सीआरपीसी की धारा 107/151 के तहत मामला दर्ज किया गया था और अगले दिन मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। मजिस्ट्रेट ने कानूनी औपचारिकताएं पूरी करने के बाद निर्देश दिया कि उन्हें प्रत्येक को 5000 रूपये के मुचलके और इतनी ही राशि के जमानतदार के साथ रिहा किया जा सकता है। उक्त प्रतिवादी उक्त तिथि पर जमानत मुचलके जमा करने की स्थिति में नहीं थे और इस प्रकार उन्हे

04.02.2007 को रिहा नहीं किया जा सका। हालांकि, अगले दिन उन्होंने स्वेच्छया से 15000 रूपये की राशि के जमानत मुचलके जमा कर दिए और इस प्रकार उन्हें रिहा कर दिया गया। तथ्यात्मक कथन किये गये की रिट याचिका पूरी तरह से झूंठी थी।

अपीलकर्ताओं को व्यक्तिगत नोटिस नहीं दिया गया था और उन्हें अपना बचाव करने का कोई अवसर भी नहीं मिला था। आक्षेपित आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का घोर उल्लंघन करते हुए पारित किया गया है। इतने छोटे मामले की जांच सीबीआई से कराने की जरूरत नही थी तथ्यात्मक विवाद का निर्धारण किए बिना प्रत्येक उत्तरदाता को 25000 रूपये का सांकेतिक मुआवजा दिया गया है। अतः अपीलें स्वीकार किये जाने योग्य है।

5. इसके विपरीत प्रतिवादी संख्या 3 और 4 की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने यह कहते हुए अपील का विरोध किया है कि अपीलकर्ताओं ने चुनाव लडने वाले उत्तरदाताओं के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन किया है और उन्हें बिना किसी औचित्य के जेल में बंद कर दिया है, इसलिए, मामले की जांच सीबीआई या किसी अन्य स्वतंत्र जांच एजेंसी द्वारा की जानी आवश्यक है। उच्च न्यायालय द्वारा सांकेतिक मुआवजा उचित रूप से दिया गया है। अपीलों में योग्यता नहीं है और ये खारिज किये जाने योग्य है।

6. हमने उभय पक्षों के विद्वान वकील द्वारा की गई प्रतिद्वंद्वी दलीलों का विचार किया है और रिकॉर्ड का अवलोकन किया है।

7. रिट याचिका में माना है कि कुल मिलाकर सात प्रतिवादी थे, जिनमें वर्तमान अपीलकर्ता और वह मजिस्ट्रेट भी शामिल था जिन्होंने सीआर.पी.सी की धारा 107/151 के तहत आदेश पारित किया था। मामले के रिकॉर्ड से पता चलता है कि मामला पहली बार 26.02.2007 को सूचीबद्ध किया गया और राज्य के विद्वान उपस्थित वकील ने सभी सात उत्तरदाताओं की ओर से नोटिस स्वीकार किया था। रिट न्यायालय के समक्ष अधिकांश उत्तरदाताओं को व्यक्तिगत क्षमता में नाम लेकर पक्षकार बनाया गया था, जिसमें उन्होंने अपनी शक्तियों से अधिक का प्रयोग करने और अपने पदों का दुरूपयोग करने का आरोप लगाया। यह दिखाने के लिए रिकार्ड पर कुछ भी नहीं है कि उपस्थित वकील ने उन लोगों के साथ कोई संचार किया था जिनके खिलाफ दुर्भावनापूर्ण आरोप लगाए गए थे, विशेष रूप से अपीलकर्ता नंबर 2 से 4 और विद्वान मजिस्ट्रेट, प्रतिवादी क्रमांक 5। इस प्रकार उनमें से किसी को भी उच्च न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने का अवसर नही मिला। हमें मूल रिट में याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील की इस दलील में कोई बल नहीं मिला कि चूकि राज्य उन सभी का प्रतिनिधित्व कर रहा था, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को सुनने की कोई आवश्यकता नही थी। निस्संदेह, इन अपीलों में दिए गए निर्णय और आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन करते हुए

पारित किए गए है और इस प्रकार केवल इसी आधार पर रदद किए जाने योग्य है।

8. उचित जांच के बाद उच्च न्यायालय के समक्ष वास्तविक स्थिति रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी, जिसमें कहा गया था कि रिट याचिकाकर्ता शराब के नशे में थे और सार्वजनिक स्थान पर एक-दूसरे को गाली दे रहे थे, धमकी दे रहे थे और झगडा कर रहे थे। पुलिसकर्मी उन पर काबू नहीं पा सके। जब उन्हें मेडिकल जांच के लिए अस्पताल ले जाया गया तो वे नशे में पाए गए और उन्होंने अस्पताल के डॉक्टर और कर्मचारियों के साथ भी र्दुव्यवहार किया। यह उच्च न्यायालय के ध्यान में लाया गया था कि संजीव कुमार - प्रतिवादी संख्या 3 पुलिस अधिकारियों को धमकी दे रहा था कि उसका चचेरा भाई श्री आशुतोषकुमार दिल्ली के तीस हजारी कोर्ट में मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट है और वह उन्हे हमेशा के लिए सबक सिखा देगा। आगे यह बताया गया कि श्री आशुतोष कुमार, महानगर मजिस्ट्रेट तीस हजारी कोर्ट, दिल्ली ने अपने मोबाईल नंबर 9868932336 से अपीलकर्ता नंबर 1 राजेन्द्र सिंह पठानिया एसएचओ पीएस समयपुर को दिनांक 03.02.2007 को उनके मोबाईल नंबर 9810030663 पर रात 10 बजे तीन मिनट बात की थी। मजिस्ट्रेट ने उक्त उत्तरदाताओं का रिहाई का आदेश पारित कर दिया था, हालांकि, उन्हें रिहा नहीं किया जा सका क्योंकि वे उतनी ही राशि की जमानत के साथ व्यक्तिगत मुचलका प्रस्तुत करने में विफल रहे। आदेश पारित करते समय उच्च न्यायालय ने रिट

याचिकाकर्ताओं से 500 रूपये की रिश्वत की मांग या डॉक्टर और कर्मचारियों के साथ उक्त उत्तरदाताओं के र्दुव्यवहार के संबंध में भौतिक तथ्यों पर जांच करना उचित नहीं समझा। अस्पताल की मेडीकल रिपोर्ट से पता चला है कि वे नशे में थे, बाबू जगजीवन राम मेमोरियल अस्पताल, जहांगीरपुरी, दिल्ली की मेडिकल रिपोर्ट दिनांक 03.2.2007 का प्रासंगिक भाग रात्रि 8.00 बजे बनाया गया। जो निम्नानुसार पढा जाता है:

''शराब की गंध

मरीज डॉक्टर और कर्मचारियों से चिढ रहा था और

दुव्यर्वहार कर रहा था''

9. रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा एक दूसरे के साथ कई दुव्यर्वहार, धमकी और झगडा करने के आरोप पर आगे की को जांच या पूछताछ नहीं की। यद्यपि उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उक्त प्रतिवादियों को एक दिन के लिए जेल में रखा गया था, जिसके परिणामस्वरूप उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ, यह महसूस किए बिना कि मजिस्ट्रेट के आदेश के आलोक में चूंकि वे मुचलके प्रस्तुत करने में विफल रहे, और अन्य कोई विकल्प उपलब्ध नहीं था और उन्हें न्यायिक में भेज दिया गया। यदि रिट याचिकाकर्ता इससे व्यथित थे, तो वे अपील/पुनपरीक्षण दायर करके इसे चुनौती दे सकते थे। यह समझ में नहीं आ रहा है कि किन परिस्थितियों में अवैध हिरासत के मुददे की जांच के लिए रिट

याचिका पर विचार किया गया, खासकर उस मामले में जहां उन्हें न्यायिक हिरासत में रखने का औचित्य था।

10. उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि इस तथ्य के बावजूद कि मजिस्ट्रेट ने 5000 रूपये के मुचलका भरने का आदेश पारित किया था मुचलक 15000 रूपये में स्वीकार किए गए थे। यह दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर कुछ भी नहीं है कि किसी भी रिट याचिकाकर्ता ने व्यक्तिगत मुचलका की राशि बढाने के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत उठाई थी। वास्तव में उक्त रिट याचिकाकर्ता ने स्वयं स्वेच्छा से 15000 रूपये के मुचलका जमा किए थे और इसलिए उस आधार पर कोई अवैधता नहीं पाई जा सकी।

11. पारित निर्णय और आदेश ने हमारी न्यायिक चेतना को झकझोर दिया कि किन परिस्थितियों में उच्च न्यायालय ने इतनी छोटी घटना को जांच के लिए सीबीआई को भेजे जाने के लिए उपयुक्त मामला माना।

12. इसी पीठ ने हाल ही में दिशा बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, जेटी (2011) 7 एससी 548 में, जबकि इससे पहले के न्यायालय के निर्णय अशोक कुमार टोडी बनाम किश्वर जहान एवं अन्य, जेटी (2011) 3 एससी 50, और नर्मदा बाई बनाम गुजरात राज्य, जेटी (2011) 4 एससी 279, में इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि सीबीआई को जांच करने का निर्देश देने के लिए अदालत को संतुष्ट होना चाहिए कि विरोधी पक्ष बहुत शक्तिशाली और प्रभावशाली व्यक्ति है या उसमें राज्य प्राधिकरण जैसे शीर्ष पुलिस अधिकारी

शामिल है और जांच उचित दिशा में आगे नहीं बढ सकती या पक्षपातपूर्ण हो सकती है, ऐसी परिस्थितियों में पूर्ण न्याय के लिए मामले की जांच सीबीआई को करने का निर्देश जारी किया जा सकता है।

13. मौजूदा मामले में रिट याचिकाकर्ताओं की शिकायत मूल रूप से दो कांस्टेबल और एक हैड कांस्टेबल के खिलाफ थी। यह ऐसा मामला नहीं था जहां यह कहा जा सके कि राज्य के अधिकारी इस घटना में हित रखते थे या इसमें शामिल थे। इस प्रकार, हमारी राय में यह उपयुक्त मामला नहीं था। जहां जांच सीबीआई को सौंपी जा सकती थी।

यह केवल मौजूदा मामले में ही नहीं है कि उच्च न्यायालय ने सीबीआई को जांच करने का निर्देश दिया है, बल्कि अन्य जुडे हुये केस जिनको इन अपीलो के साथ सुना गया था और जिनको अलग आदेश द्वारा निपटाया गया था। उसी दिन दिनांक 25.02.2008 को उसी माननीय न्यायाधीश ने सीआरपीसी की धारा 107/151 के तहत एक और मामूली मामले में सीबीआई जांच का निर्देश दिया। इसके अलावा 28.02.2008 को धारा 107/151 सीआरपीसी के तहत एक अन्य मामले में भी सीबीआई जांच का निर्देश दिया गया था। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय इस तरह के निर्देशों को बहुत ही औपचारिक और विनम्र तरीके से यह मानते हुए पारित कर रहा है कि प्रत्येक जांच विशेष जांच एजेंसी द्वारा होनी चाहिए।

14. धारा 107/151 सीआरपीसी का उद्देश्य निवारक न्याय के लिये है ना कि दंडात्मक कार्यवाहियों के लिए। धारा 151 केवल तभी लागू किया जाना चाहिए जब सीआर.पी.सी की धारा 107 के तहत तनाव का खतरा हो या शांति भंग होने की संभावना हो। धारा 151 के तहत गिरफतारी का समर्थन किया जा सकता है जब गिरफतार किया जाने वाला व्यक्ति संज्ञेय अपराध करने की योजना बनाता है। यदि शांति भंग होने की आशंका से निपटने के लिए धारा 107/151 के तहत कार्यवाही नितांत आवश्यक प्रतीत होती है तो त्वरित कार्रवाई करना संबंधित प्राधिकारी पर निर्भर करता है। धारा 107 के तहत कार्यवाही करने के लिए मजिस्ट्रेट को जो अधिकार क्षेत्र दिया गया है, उसका प्रयोग आपातकालीन स्थिति में ही किया जाना चाहिए।

15. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अवलोकन मात्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि जिन शर्तों के तहत एक पुलिस अधिकारी किसी व्यक्ति को जो मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना और बिना वारंट के गिरफतार कर सकता है वह धारा 151 में निर्धारित किया गया है। ऐसा तभी कर सकते हैं जब उसे संबंधित व्यक्ति द्वारा कोई संज्ञेय अपराध करने की साजिश का पता चल गया हो। ऐसी शक्ति के प्रयोग के लिए एक और शर्त, जिसे पूरा भी किया जाना चाहिए, वह यह है कि गिरफतारी केवल तभी की जानी चाहिए जब संबंधित पुलिस अधिकारी को यह प्रतीत हो कि अन्यथा अपराध को रोका नहीं जा सकता। इसलिए धारा स्पष्ट रूप से मजिस्ट्रेट के आदेश के

बिना और वारंट के बिना गिरफतार करने की शक्ति के प्रयोग के लिए आवश्यकताओं को निर्धारित करती है। यदि ये शर्तें पूरी नहीं होती है और किसी व्यक्ति को सीआर.पी.सी की धारा 151 के तहत गिरफतार किया जाता है, तो गिरफतार करने वाले प्राधिकारी पर संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 में निहित मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने के लिए कानून के तहत कार्यवाही की जा सकती है। (अहमद नूरमोहम्मद भटटी बनाम गुजरात राज्य और अन्य एफआईआर 2005 एससी 2115)

(यह भी देखें जोगिंदर कुमार बनाम यूपी राज्य और अन्य एआईआर 1994 एससी 1349, डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, एआईआर 1997 एससी 610)

16. वर्तमान मामले में धारा 107/151 सीआरपीसी के तहत कार्यवाही 4.2.2007 को शुरू की गई थी और उच्च न्यायालय ने कार्यवाही रदद कर दी है। इतने विलम्बित चरण में निर्णय की शुद्धता पर उस सीमा तक विचार करने की आवश्यकता नहीं है। अन्यथा भी इस स्तर पर उन कार्यवाहियों को रदद करने का मुददा पूरी तरह अकादमिक ही बना रहेगा। इसलिए हम उस विस्तार तक दिए गए फैसले को बरकरार रखते हैं।

17. किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के मामले में मुआवजे के पुरस्कार के मुददे पर इस न्यायालय द्वारा बार बार विचार किया गया है और यह लगातार माना गया है कि हालांकि उच्च न्यायालय

और यह न्यायालय अनुच्छेद 32 और 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए ऐसे उल्लंघनां के लिए मुआवजा दे सकते है लेकिन ऐसी शक्ति का प्रयोग सामान्य ढंग से नहीं किया जाना चाहिए। इन अनुच्छेदों का उपयोग उन अधिकारों और दायित्वों के प्रवर्तन के विकल्प के रूप में नहीं किया जा सकता है जिन्हें न्यायालयों की सामान्य प्रक्रिया के माध्यम से प्रभावकारित से लागू किया जा सकता है। कोई भी मुआवजा देने से पहले शिकायत में कथित तथ्यों के सवाल पर उचित जांच होनी चाहिए। न्यायालय रिपोर्ट की जांच कर सकती है और उसका खंडन करने के लिए आपत्तियां दाखिल करने और दूसरे पक्ष को सुनने का अवसर देने के बाद मुददे का निर्धारण कर सकती है। यदि अदालत पूछताछ में पेश किए गए सबूतों की पुनः मूल्यांकन पर उसी निष्कर्ष पर पहुंचती है तो मुआवजा देने की अनुमति दी जाती है। ऐसी स्थिति में मौद्रिक मुआवजा देने की अनुमति है ''जब राज्य या उसके सेवकों द्वारा अपनी शक्तियों के कथित कृत्य में किए गए उल्लंघन के लिए निवारण का यही एकमात्र व्यावहारिक तरीका उपलब्ध हो''।

(वाइडःसेबस्टियन एम. होंग्रे बनाम भारत संघ, एआईआर 1984 एससी 1026: भीमसिंह, एमएलए बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य और अन्य, एआईआर 1986 एससी 494; श्रीमति नीलाबती बेहरा बनाम उडीसा राज्य और अन्य एआईआर 1993 एससी 1960; डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, एआईआर 1997 एससी 610, अध्यक्ष, रेल्वे बोर्ड और अन्य बनाम

श्रीमति चंद्रिमा दास और अन्य, एआईआर 2000 एससी 988; और एस.पी.एस. राठौड बनाम हरियाणा राज्य और अन्य, (2005) 10 एचसीसी 1)।

18. सूबे सिंह बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, एआईआर 2006 एससी 1117 में, इसी तरह के मुददे से निपटारा करते समय इस न्यायालय में निम्नानुसार निर्णय दिया:

> "ऐसे मामलों में जहां हिरासत में मौत या हिरासत में याताना या अनुच्छेद 21 के तहत प्रत्याभूत अधिकारों का उल्लंघन साबित होता है, अदालतें अनुच्छेद 32 या 226 के तहत कार्यवाही में मुआवजा दे सकती हैं। हालांकि मुआवजा देने से पहले अदालत को खुद के सामने निम्नलिखित प्रश्न पेश होगें। (ए) क्या अनुच्छेद 21 का उल्लंघन स्पष्ट और निर्विवाद है (बी) क्या उल्लंघन गंभीर है और अदालत की अंतरात्मा को झकझोर करने वाला है (सी) क्या कथित हिरासत में यातना के परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है.....जहां स्पष्ट संकेत है कि आरोप झूंठे हैं या पूरी तरह से या आंशिक रूप से अतिरंजित है, अदालतें अनुच्छेद 32 या 226 के तहत सार्वजनिक कानून के उपाय के रूप में मुआवजा नहीं दे सकती है, लेकिन पीडित पक्ष को उचित

नागरिक/आपराधिक कार्यवाही को पारंपरिक उपायों के माध्यम से वापस कर सकती हैं।''

(यहां यह भी देखें: मुंशी सिंह गौतम (डी) और अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य, एआईआर 2005 एससी 402; और भारत अमृतलाल कोठारी बनाम दोसुखान समदखान सिंधी और अन्य, एआईआर 2010 एससी 475)।

19. उपरोक्त के ध्यान में रखते हुए हम इस सुविचारित राय पर है उच्च न्यायालय ने प्रत्येक को 25000 रूपये का सांकेतिक मुआवजा देने में भी गलती की, क्योंकि उच्च न्यायालय ने कोई जांच नहीं की और केवल अपीलकर्ता संख्या 1 द्वारा प्रस्तुत स्थिति रिपोर्ट पर बिना किसी सुनवाई के विचार करने के बाद उन व्यक्तियों के जिनके विरूद्ध सत्ता के दुरूपयोग के आरोप लगाए थे आदेश पारित कर दिया। ऐसा आदेश निरस्त किये जाने योग्य है।

20. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए अपील सफल होती है और स्वीकार की जाती हैं। इस आक्षेपित निर्णय और आदेश को उस विस्तार के सिवाय रद्द किया जाता है, जहां प्रतिवाद करने वाले उत्तरदाताओं के विरूद्ध धारा 107/151 सीआरपीसी के तहत कार्यवाही निरस्त कर दी गई थी।

अपील स्वीकार की गई

नोटः यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्री विजेन्द्र कुमार मीणा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।